ISSN: 2454- 2695
Volume 01 Issue 02
March 2015

साहित्य संहिता
Available at http://sahityasamhita.org/

संवादः चार ऋतु विरह की

राकेश कुमार वर्मा
कवि, लेखक, आर्टिस्ट (linesays.org)

स्वामी अपनी प्रियतमा से बहुत वर्ष दूर रहने के बाद घर वापस लोटता हैं, काम-काज के सिलसिले में अक्सर उसे बहार जाना पड़ता हैं, मगर इस बार समय अवधि कुछ ज्यादा ही लम्बी हो गयी, पुरे ४ ऋतु बीत जाने के बाद उसका आना हुआ, कम-काज की उलझनों और प्रियतमा से दुरी और नाराजगी की विसंगति से समय निकाल क्र घर लोटा है, घर के आंगन में लगे नीम के पेड़ को घर के उच्चतम शिखर की छाया जड़ो पे छूने को है, आकाश में तारो की चहलकदमी अभी शुरू ही हुयी थी, के नायक घर की दहलीज पे दस्तक देता है, बूढ़े माता पिता के चहरे, उसे देखर चमक नजर आती हैं, दोड़कर वे दोनों बारी बारी उसे गले लगाते हैं, घर के बाये कोने में बनी छोटी रशोई में बर्तन साफ़ करती नायिका, उसे देखर विकल हो जाती है, और अपने कमरे की और दोड जाती हैं, माता पिता से मिलन के बाद नायक, नायिका के कमरे में पहुचता है, जहाँ नायिका उसे देखर, एक कोने में सिमट जाती हैं, नायक दरवाजे पे कुण्डी चढाते हुए कहता हैं;

प्रिये इधर आओ!

मगर नायिका उसके पास नहीं आती, रूठी हुयी कोने में सिर छुपा लेती है, तब नायक अपनी मनो दशा को कुछ इस तरह व्यक्त करता है.....

कुंचित हैं रेशे मेरी भावनाओ के,
मेरे अधर की ग्लानि से निकालो, और
मेरे सीने से लिपट जाओ,
प्रिये इधर आओ!
रक्ताय्मान चहरा तेरा,
चंद्रमा में गहरा,
बिन्दुवत अंधकार जान पड़ता है,
मेरे मर्म धरती कुरेदता,
तीक्षण कृपाण जन पड़ता हैं,
तेरी लालिमा बरे स्नेह के अभाव में,
जडवत होती धरा मन की,
सिंचित हो जाये,

ISSN: 2454- 2695
Volume 01 Issue 02
March 2015

प्रिये इधर आओ!
मेरी समझ को प्रकाश के बाणों से,
छेद कर, भावनाओ के केशों को,
सुलझाओ,
प्रिये मेरे करीब आओ!
विहंगम हैं जो दर्श्य,
कई ऋतुओ से,
आज मेघ बनके बरसो,
मेरी प्रेम सरिता में बह जाओ,
प्रिये मेरे उर लाओ.........

स्वामी के वचनों को सुनकर नायिका का ह्रदय विकलता में भर जाता हैं, अश्रुओं की धारा उसके कोमल गालो पे मंधागिनी की बहती कोतुहल में निकल जाती हैं, नायिका भावनाओ के इस ज्वार को, कठोरता के दमन से बंधती हुई कहने लगती हैं......

स्वामी!
विरह की ऋतु में,
कालिमा भरी राते,
मेरे तन-मन पे,
बिजली सी चमकती है.......
स्वामी!
सुबह की प्रथम ओजश, पाकर
ये आँखे,
आपकी तस्वीर निरखती है.....
स्वामी!
बड़ी कठिन ये बैडी,
प्रेम काया पे हैं डाली..........
स्वामी!
इस बार भी हैं दिन चार मुट्टी में,
तन्द्रा चढ़ी हैं ह्रदय भावनाओ पे,

ISSN: 2454- 2695

Volume 01 Issue 02
March 2015

अपने स्पर्श से फिर न जगाओ....
स्वामी दूर ही रहो,
देखो दामन हाथ न लाओ....

नायक भावनाओ के ज्वार में उलझी नायिका को अपनी बाहों में जकड लेता हैं, और मिठाश में लीन दो शब्द ही कहता हैं....

प्रिये!

प्रियतमा!

प्रेम की बेडियो में बंधी नायिका अपने संकोच की बेडी तोडकर अपने प्रेम को कुछ इन शब्दों में बांधती है....

विषमता हैं खडी मेरे दिल के द्वारे,
मन कहे फिर दिल हरे,
मगर,
संकुचित ह्रदय संग,
कैसे?
प्रफुलित हो, और
कैसे?
रोके खुदको, बिना तेरे
स्वामी!
अंग लाये..........................